P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-3* ISSUE-9*(Part-1) December 2018
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

रामेश्वर शुक्ल अंचल का साहित्य सौंदर्य

अमित शुक्ल
प्राध्यापक,
हिन्दी विभाग,
शा. ठाकुर रणमत सिंह
महाविद्यालय,
रीवा (म.प्र.)

सारांश

रामेश्वर शुक्ल अंचल आधुनिक युग की हिन्दी कविता और गीतों के प्रतिनिधि काव्य शिल्पी हैं। उन्होंने कविताओं के साथ उपन्यास, और कहानी भी लिखी है पर आधुनिक हिन्दी जगत में अंचल जी का काव्य के रूप में ही अत्यधिक लोकप्रियता पाई है। अंचल जी के जीवन का एक बड़ा भाग प्रकृति के निकट बीता है फिर भी उनके काव्य में प्रकृति के प्रति वह आकर्षण नहीं पाया जाता जो किसी प्रकृति मुग्ध कवि की विशेषता होनी चाहिए। अंचल जी प्रकृति के निकट गए तो अवश्य हैं पर वह केवल मानसिक द्वन्द्व से मुक्ति पाने के लिए, उसमें रमने के लिए नहीं। उनका स्व का वृत्त धीरे–धीरे व्यापक परिधि बनाता गया है और परिणामतः उसमें समाज और राष्ट्र सम्बन्धी विचारधारा ने प्रवेश पाया है। रामेश्वर शुक्ल 'अंचल' जी ने जीवन में भिन्न–भिन्न परिस्थितियों में उठने वाले भावों को सरल अभिव्यक्ति दी है। अंचल जी का विश्वास है कि कविता निष्कपटता और सच्चाई पर सबसे अधिक आग्रह करती है इसीलिए कहीं कवि अपने हृदय में गूँजती बांसुरी के सरस स्वर बिखेरता है तो कहीं उसकी लेखनी के ज्वालामुखी की विस्फोटक चिनगारियाँ निकलती हैं।

मुख्य शब्द : काव्य शिल्पी, चिनगारियाँ, सौन्दर्य, चेतना, काव्य , विरह, यौवन, प्रकृति, विशिष्ट शब्दावली, रूढ़िवादिता, आर्थिक वैषम्य, पूँजीवाद।

प्रस्तावना

रामेश्वर शुक्ल अंचल आधुनिक युग की हिन्दी कविता और गीतों के प्रतिनिधि काव्य शिल्पी हैं। उनका यह सौंदर्य उनके निम्न साहित्य मे देखने को मिलता है।

कविता संग्रह के अंतर्गत

मधूलिका, अपराजिता, लाल–चूनर, वर्षान्त के बादल, विराम चिन्ह, प्रतयूष कीमट की किरण, यायवरी, किरणवेला। कहानी–ये वे बहुतेरे, तारे। निबन्ध–समाज और साहित्य, रेखा लेखा, हिन्दी साहित्य अनुशीलन आदि हैं। अंचल ने लगभग 15–16 वर्ष की आयु में कविता लिखना प्रारम्भ कर दिया था। उनके घर का वातावरण काव्यमय होने के कारण काव्य लेखन की प्रेरणा वहीं से मिली। इसी के साथ अंचल जी पर सुमित्रानन्दन पंत का भी प्रभाव था। पंत की स्वच्छन्द भाव विहरिणी कविताओं ने ही उन्हें सौन्दर्य चेतना दी। पल्लव और वीणा की मधुर संगीतमयी और चित्रात्मक भाषा ने अचंल जी को बहुत आकर्षित किया और यहीं से प्रेरणा पाकर उन्होंने अपनी कल्पनाओं को गीतों में बांधने का निश्चय किया। यहीं से कवि अंचल ने सुकुमारता, सुषमा और रूप माधुरी के चलचित्र बनाए और सौन्र्य के नूतन स्वप्न सजाये। उनके काव्य संग्रह की प्रथम कविता उस क्षण है। जो सन् 1932 में मासिक पत्रिका माधुरी के मुख पुष्ठ पर छपी थी। अंचल जी का प्रथम काव्य संग्रह मधूलिका है जो सन् 1938 में प्रकाशित हुआ। इस काव्य संग्रह के एक वर्ष पश्चात् ही अपराजिता प्रकाशित हुई इन दोनों संग्रहों की कविताओं में कवि का किशोर हृदय ही तरंगायित है। इस समय कवि के यौवन का उषाकाल था। अतः इन कृतियों में स्थूल श्रृंगारिकता की बहुलता है। मधूलिका में रूपशक्ति, सौन्दर्यनिष्ठा, यौवन की तृष्णा एक ललक, स्वप्नों का रंग–बिरंगा चमकीलापन और भावुकता है–

कौन सलोनी घरी मुझे कर देती पागल सा,
कौन अनगवती रग रग में भरती प्रबल पिपासा।

कवि जवानी के जोश में इतना भौतिकवादी हो जाता है कि वह दर्शन के क्षेत्र में चार्वाक सिद्धान्त का समर्थक और प्रचारक बन जाता है। उसे भविष्य पर विश्वास नहीं वह वर्तमान का पुजारी बन जाता है।

आज के दौर चलें यह कली की अभिलाषा कैसी?
कल आयेगा यह क्या निश्चय, यह कल की आशा कैसी?

परन्तु फिर भी उसे अपने यौवन पर तो अटल विश्वास रहता है–

हमें सदा विश्वास सखी री।
इस मद भरी जवानी का,
हमें भरोसा है सदैव इस असिंधारा के पानी का।

इतना भरोसा होने के बाद भी कवि के जीवन में परिवर्तन आता है। उनका संयोग वियोग में बदल जाता है। उसके मन के दो टुकड़े हो जाते हैं।[1] कवि को जो यौवन की पुलक पूरित बरसाती रात में वंशी की तान सुना रहा था वह टूट जाती है। अब उसके पास कुछ भी नहीं रहता बस सुधियों का सहारा शेष बचता है। अब वह एकाकीपन का अनुभव करता है। यहीं से उसकी वेदना बलवती होती है जिसका आदि तो है पर अंत नहीं। यहीं से अंचलजी के काव्य में विरह का स्वर मुखर होता है। कवि स्वयं ही इस बात को मानता है कि यदि जीवन में संयोग ही रहता तो वह इतने मधुर गीत न लिख पाता–

जीवन में यह मिलने का पल अमरत्व
अगर बनकर आता। क्यों होता मेरा कंठ
मधुर–क्यों मैं इतना मीठा गाता। संतप्त
पुकारों में मेरी कैसे संगीत मुखर होता,
यदि एक मनोरम सपने में रह जाता सारी
निशि सोता।

अंचल की अपराजिता में, स्मृतियों का, और उनके दाह का यही तांता, प्रारम्भ से लेकर अंत तक मिलता है। मधूलिका की कविताओं में कल्पना की प्रधानता है और अनुभूति की कमी है, परन्तु अपराजिता में अनुभूति की प्रधानता मिलती है। मधूलिका और अपराजिता की कविताओं में श्रृंगारिकता और भौतिकता मिलती है। परन्तु मर्यादित है–नित विश्वास वर्तिका मेरी रही थपेड़ों में पलती, मेरे स्नेह हीन दीपक में ज्योति तुम्हारी ही तो जलती।

मधूलिका और अपराजिता की कविताओं में एक खंडित जीवन का दर्शन होता है। ये कविताएँ कवि के आन्तरिक हृदय से निकली हुई प्रतीत होती है इसी कारण दूसरों के हृदय को छू जाती है। अंचल अपने तीसरे कविता संग्रह किरणबेला सन् 1941 में अपनी लीक बदल देने की घोषणा करते हैं और एक प्रगतिवादी कवि के रूप में बोलने का प्रयत्न करते हैं। किरणबेला की प्रगतिशील कविताओं में इन बोलो को सुना जा सकता है। करील सन् 1942 और लाल चूनर सन् 1943 में भी प्रगतिशील गीत हैं। इन गीतों में स्वर तो प्रगति का ही साधने का प्रयत्न किया है किन्तु ठीक से सध नहीं सका है–उनमें जनता की भावनाओं को स्पष्ट वाणी देने की क्षमता नहीं है। इन संग्रहों में भी कवि अपनी प्रणय सम्बन्धी लीक को भी छोड़ नहीं पाया है। प्रणय सम्बन्धी कविताओं में उसके पिछले विचारों, भावों की भी आवृत्ति हुई है। लाल चूनर में कवि अंचल पुनः मधूलिका और अपराजिता के भाव लोक में लौट पड़ते हैं। इन कविताओं का विषय वही प्रेम, यौवन और श्रृंगार है। यायावरी सन् 1964 में आकर कवि अपनी फिर पुरानी बातों की याद करता है। उसके सामने विगत जीवन के चित्र बनते चले जाते हैं और वह कह उठता है–

देखो, मेरे दिल ने अब तक कितना कितना
धोखा खाया, किन किन मृगतृष्णाओं ने
मुझको डसा और सब दिन तरसाया।

छायावादी कवि नारी के रूप सौन्दर्य और उसके यौवन पर मुग्ध तो थे पर वे अपनी भावनाओं को अत्यन्त परिष्कृत रूप में अभिव्यक्त करते थे परन्तु अंचल जी के काव्य में तत्कालीन अंकुश के प्रति तीव्र प्रतिक्रिया है इसी कारण उनकी श्रृंगार परक कविताएँ स्थूल और मांसल है। अंचलजी के काव्य में अधिकांशतः नारी के प्रति प्रेम मिलता है। उन्होंने नारी चित्रण में किसी प्रकार की गोपनीयता नहीं रखी–

मैं अर्थ बताता द्रोह भरे यौवन का ,
मैं नग्न वासना की गाता उच्छंखल।

अंचल जी के काव्य से यह प्रतीत होता है कि उनमें संयोग के क्षण कम और वियोग के क्षण अधिक हैं। जब मनुष्य मानसिक रूप से प्रताड़ित होता है तो वह अवसाद में डूब जाता है उस समय मनुष्य को यदि प्रकृति का साथ मिल जाय तो उसका दुख हल्का हो जाता है। सुख और संयोग के समय में भी प्रकृति हृदय को आनन्द और पुलक देने वाली होती है इसी कारण अधिकांशतः कवियों का ध्यान इधर जाता रहा है। अंचलजी ने भी इसी प्रकार कुछ प्रकृति परक गीत लिखे हैं। उनके इन गीतों को पढ़कर यह सिद्ध नहीं होता कि कवि मूलतः प्रकृति को ही प्यार करते हैं। अंचल जी ने प्राकृतिक सौन्दर्य और समृद्धि का अधिकतर प्रयोग वातावरण की सृष्टि और सज्जा में ही किया है। छायावाद की एक प्रमुख प्रवृत्ति यह भी थी कि वहाँ प्रकृति का मानवीकरण किया गया। अंचल जी में भी यह प्रवृत्ति देखने को मिलती है। शारदी सन्ध्या का एक चित्र प्रस्तुत है–[2]

देख संगिनि। पति रूग्णा शारदी सन्ध्या,
जो शिथिल लेटी दिवा की मृत्यु शैया पर।

अंचल जी के जीवन का एक बड़ा भाग प्रकृति के निकट बीता है फिर भी उनके काव्य में प्रकृति के प्रति वह आकर्षण नहीं पाया जाता जो किसी प्रकृति मुग्ध कवि की विशेषता होनी चाहिए। अंचल जी प्रकृति के निकट गए तो अवश्य हैं पर वह केवल मानसिक द्वन्द्व से मुक्ति पाने के लिए, उसमें रमने के लिए नहीं। उनका स्व का वृत्त धीरे–धीरे व्यापक परिधि बनाता गया है और परिणामतः उसमें समाज और राष्ट्र सम्बन्धी विचारधारा ने प्रवेश पाया है। स्वतंत्रता प्राप्त होने से पूर्व ही उन्होंने शांति पर्व नामक शीर्षक में निर्भीकता पूर्वक लिखा है–

ओ हिंसा के सौदागर अपनी दुकान उठा
लो, शान्ति पर्व है भागो भागो घृणा बेचने
वालो।

अंचल जी इस बात को अच्छी तरह से जानते है। कि हम गांधी का नाम तो बहुत लेते हैं परन्तु वास्तव में उनके सुझाये गए मार्ग का अनुसरण नहीं करते सत्य और अहिंसा के गीत तो गाते हैं परन्तु उनसे हमारा दूर का भी नाता नहीं रहा–

गीत तुम्हारे गाते गाते हम तुमको ही भूल
गए। मंदिर में ठहराया तुमको हम पापों
में झूल गए। साथ तुम्हारे सत्य अहिंसा
के दो जीवन भूल गए।

अपने समय के राष्ट्रकवि महाकवि तुलसीदास के प्रति भी कवि ने अपनी काव्यांजलि समर्पित की है, जिससे

कवि अंचल का देश प्रेम और भारतीय संस्कृति के प्रति प्रेम झलकता है–

डूब रहा था देश, दमन की संगीनों का साया था।
संस्कृति घायल सिसक रही थी धर्म चकित भरमाया था।
अंधकार के उस गौरव में तुम रवि के विश्वास बने।
कमी न कोई पहले इतनी ज्योति जगत में लाया था।

कवि अंचल की इन राष्ट्र पुरूषों के प्रति, अपनी संस्कृति के प्रति आस्था अवश्य रही है तभी तो कवि ने कहा है कि–

देश प्रेम के ओ मतवालो उनको भूल न जाना।
महाप्रलय की अग्नि साथ लेकर जो जग में आये।

कवि यह अच्छी तरह समझते हैं कि आज जो अपने देश में क्रांति लाने की बातें करते हैं वे ही सबसे अधिक स्वार्थी हैं उन्हें कुर्सी का लोभ सता रहा है। अतः इन झूठे नारों से क्रांति नहीं आ सकती–

नहीं जलेगी, आग क्रांति की,
इन फूकों से नहीं जलेगी, भरे पड़े हैं
दाग विलासों के चुम्बन के।

कवि ने अपने देश और अपनी संस्कृति के विषय में भले ही उसकी अभिव्यक्ति कम स्थलों पर की है फिर भी उन्होंने अपने देश और अपनी संस्कृति की ओर अधिक दृष्टि रखते हुए उसका यथार्थ रूप पहचाना है। अंचल जी के लोकगीतों की भाषा लोकभाषा ही है उन्होंने लोकधुन पर आधारित गीत लिखे, परन्तु वे गीत अधिक लोकप्रिय नहीं हो सके। इसका कारण है कि ये गीत सहज रूप से रचे हुए नहीं हैं।[3] जिस प्रकार एक विशिष्ट शब्दावली का प्रयोग करके कोई रचना प्रगतिवादी नहीं कहला सकती उसी प्रकार तद्भव और ग्रामीण शब्द भर देने से कोई गीत लोकगीत नहीं कहला सकता। अंचल जी का यह गीत लोकगीतों के निकट रखा जा सकता है–

खोलो केवरियाँ खोलो रस के बूंदा परे।
सहसा इकहरी घटा गहराई
आ रही थी, न मैं बिलमाई
भीजै चोली, भीजे फरिया
भीजै सारी की सारी लहरिया
खोलो केवरियाँ.....

अंचल जी ने प्रेम और सौन्दर्य के आवरणमय रूप को कहीं भी स्वीकार नहीं किया है। उन्होंने रूप के प्रति आसक्ति, मांसल और उद्दाम इच्छाओं की ललक को ही लेकर काव्य सर्जना प्रारम्भ की थी। कुछ काल तक प्रगतिशील रचनाएँ भी कीं। किन्तु उनका मूल स्वर, उद्दाम प्रेम की अभिव्यक्ति कहीं भी सुप्तावस्था में नहीं रही है। अंचल जी का मूल स्वर हमेशा सचेत तथा जागृत रहा है उनकी इसी प्रवृत्ति को लक्ष्य कर आचार्य नन्द दुलारे बाजपेयी ने उन्हें नवीन हिन्दी का क्रान्ति दूत, क्रांति सृष्टा कहा था। अंचल जी का प्रत्यक्ष सम्बन्ध उनकी रचनाओं से है भावों की गम्भीरता और सौन्दर्य के प्रति आकर्षण उनके स्वभाव में है। छायावादोत्तर स्वच्छन्दतावादी कवियों में उनका व्यक्तित्व सर्वाधिक सपाट और स्वच्छ है। उन्होंने अपने काव्य में अन्तःप्रेरणा को ही महत्व दिया है। मधूलिका कवि की प्रथम काव्य कृति है और इस कृति में कवि को छायावादी संस्कार के प्रति विद्रोह करते हुए देखा जा सकता है। संग्रह की प्रारम्भिक कविताओं में ही कवि की भावधारा स्पष्ट रूप से लक्षित होती है जिसके आधार पर कहा जा सकता है कि अंचल जी की कविताओं के केन्द्र में तृष्णा, यौवन, रूपशक्ति तथा उन्माद के तत्व स्थूलता लिए हुए हैं। रूपपरी, तृष्णा, मधु का पापी, आदि कविताओं में कवि ने अपनी रागात्मक स्थिति की अभिव्यक्ति स्थूल रूप में की है। प्रस्तुत संग्रह की अन्तिम कविता मरण की गोद में अंचल जी ने अपनी भावनाओं को एक नये धरातल पर प्रतिष्ठित किया है। इस कविता में नारी के प्रति सहानुभूति और पूँजीपति वर्ग के प्रति उसका आक्रोश सम्पूर्ण तीव्रता के साथ व्यक्त हुआ है।[4] ईश्वर पर भी छींटे किए गए हैं। इस कविता में कवि की स्पष्टता कुछ अधिक सीमाहीन न होकर व्यक्त हुई है। इसकी मौलिकता को दृष्टिगत रखते हुए आचार्य विनय मोहन शर्मा ने इस संग्रह की भूमिका में स्पष्ट लिखा है कि अंचल जी ने दूसरे के स्वर को अपनी कविता में कहीं भी भरने की चेष्टा नहीं की, उन्होंने अपना ही दर्द, अपनी ही खुशी और अपनी ही उदासी इनमें भरी है। अपने ही अनुभवों की अभिव्यंजना इनमें हैं। अंचल का दूसरा काव्य संग्रह अपराजिता (सन् 1939) में आया। इसकी भावभूमि का निर्माण मधूलिका के आधार पर ही हुआ है। अन्तर केवल इतना है कि यहाँ कवि की श्रृंगारिक अनुभूतियाँ वियोग की भूमिका पर प्रतिष्ठित हैं। इसे वियोग काव्य भी कहा जा सकता है। वियोग की भूमिका होने के कारण कवि की तृष्णा और लालसा यहाँ स्वाभाविकता के साथ प्रगट हुई है। जलती निशानी, ओ नैया के खेने वाले, फिर भी भूल न पाता उनको इत्यादि कविताओं में कवि की तृष्णा और लालसा को संयमित रूप में देखा जा सकता है। अपराजिता में वियोग के अनेक ऐसे चित्र अंचल जी ने प्रस्तुत किये हैं जहाँ उनकी भावना की एकनिष्ठता को सहज ही परखा जा सकता है। अंचल के विरह को वैयक्तिक स्वीकार करते हुए भी नितान्त एकान्तिक नहीं कहा जा सकता। अपराजिता की विरह प्रसूत अनेक कविताओं को कवि की मनःस्थिति में उठते हुए अनेक भावनाओं के साथ देखा जा सकता है। आचार्य नन्द दुलारे बाजपेयी ने अंचल के इसी वैयक्तिक विद्रोह पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि ''अंचल की वैयक्तिता सर्वथा एकान्तिक नहीं है, न उसमें कोरी कल्पना की प्रधानता है। बिना वैयक्तिकता के विद्रोह पनप नहीं सकता। कहने की आवश्यकता नहीं कि अंचल का विद्रोह इसी वैयक्तिक पहलू को लेकर है। अपराजिता में कवि की पीड़ा के साथ उसका सोया हुआ आत्मविश्वास भी जाग उठा है। साहस और आशा के स्वर भी मुखरित हुए हैं। कुछ कविताएँ प्रकृति परक भी हैं। इन कविताओं में या तो विशुद्ध प्रकृति चित्रण है या कवि ने अपनी पीड़ा को उदीप्त करने के लिए प्रकृति को माध्यम रूप में ग्रहण किया है। संग्रह की अनेक प्रगतिशील रचनाएँ नारेबाजी के स्तर पर ही प्राप्त होती हैं। क्रांति की पुकार, लोक युद्ध इत्यादि अनेक कविताओं की उपयोगिता संग्रह को विस्तार देने के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। इन कविताओं में कवि को एक हल्के स्तर पर क्रांति का आवाहन करते हुए देखा जा सकता है। इस संग्रह के आधार पर यह कहा जा सकता है कि अंचल की प्रगतिशील रचनाओं के मूल में उसकी तृष्णा और लालसा की अभिव्यक्ति ही मिलती

है। कवि की उफनती वासना की पूर्ति के अभाव से उत्पन्न मन की स्वाभाविक खीझ भरी झुंझुलाहट ही श्रृंगार से चलकर आवेग भरी अभिव्यक्तियों के रूप में प्रगतिवादी स्वर जन्मा देती है। कवि का पाँचवा काव्य संग्रह लाल चूनर सन् 1944 में आया इस काव्य संग्रह की भूमिका में कवि ने वर्गवादी चेतना पर आधारित अपने पिछले काव्य पर प्रश्न वाचक चिन्ह लगाये हैं।[5]

अध्ययन का उद्देश्य

आधुनिक युग की हिन्दी कविता और गीतों के प्रतिनिधि काव्य शिल्पी के रूप में रामेश्वर शुक्ल अंचल अत्यंत लोकप्रिय कवि रहे हैं। उन्होंने कविताओं के साथ उपन्यास, और कहानी भी लिखी है पर आधुनिक हिन्दी जगत में अंचल जी का काव्य के रूप में ही अत्यधिक लोकप्रियता पाई है। इस शोध के अध्ययन का उद्देश्य अंचलके काव्य साहित्य के अनछुए पहलुओं को स्पर्श करना है। अंचल जी के जीवन का एक बड़ा भाग प्रकृति के निकट बीता है फिर भी उनके काव्य में प्रकृति के प्रति वह आकर्षण नहीं पाया जाता जो किसी प्रकृति मुग्ध कवि की विशेषता होनी चाहिए। अंचल जी प्रकृति के निकट गए तो अवश्य हैं पर वह केवल मानसिक द्वन्द से मुक्ति पाने के लिए, उसमें रमने के लिए नहीं। उनका स्व का वृत्त धीरे–धीरे व्यापक परिधि बनाता गया है और परिणामतः उसमें समाज और राष्ट्र सम्बन्धी विचारधारा ने प्रवेश पाया है। रामेश्वर शुक्ल 'अंचल' जी ने जीवन में भिन्न–भिन्न परिस्थितियों में उठने वाले भावों को सरल अभिव्यक्ति दी है। उन अभिव्यक्ति को उनके काव्य सौदर्य के माध्यम से उकेरना ही इस शोध का उद्देश्य रहा है।

निष्कर्ष

निष्कर्ष यह है कि रामेश्वर शुक्ल 'अंचल' जी ने जीवन में भिन्न–भिन्न परिस्थितियों में उठने वाले भावों को सरल अभिव्यक्ति दी है। अंचल जी का विश्वास है कि कविता निष्कपटता और सच्चाई पर सबसे अधिक आग्रह करती है इसीलिए कहीं कवि अपने हृदय में गूँजती बांसुरी के सरस स्वर बिखेरता है तो कहीं उसकी लेखनी के ज्वालामुखी की विस्फोटक चिनगारियाँ निकलती हैं। देखा जाये तो अंचलजी का काव्य यौवन, प्रेम और सौन्दर्य का काव्य है। उनके अधिकांश काव्य में यौवन का उद्दाम और प्रबलतम वेग ही देखने को मिलता है। छायावाद की काल्पनिक, सूक्ष्म प्रेम व्यंजना के प्रति उनकी व्यापक तीव्र और बहुमुखी प्रतिक्रिया को देखकर आचार्य नन्द दुलारे बाजपेयी ने हिन्दी साहित्य–बीसवीं शताब्दी में उन्हें नवीन हिन्दी कविता का क्रांति दूत, क्रांति का सृष्टा कहा था। वास्तविकता यह है कि अंचल के काव्य जैसी मस्ती और वेग छायावादी कवियों में से किसी में भी दिखाई नहीं देती। यही अंचल जी के काव्य की महत्वपूर्ण विशेषता है। वे भाषा शैली, कला तथा शिल्प की दृष्टि से भी पूर्णतः सफल कहे जा सकते हैं। अंचल जी की काव्य शैली और अभिव्यक्ति के हिन्दी काव्य को समृद्ध किया है। उनके बिना कविता अधूरी है उन्होंने अपने भावों को सजीव और सशक्त अभिव्यक्ति दी है।6

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *आधुनिक हिन्दी कविता की प्रवृत्तियाँ–डॉ. नगेन्द्र, आर्य प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 32*
2. *आधुनिक साहित्य की व्यक्तिवादी भूमिका–डॉ. बालभ्रद तिवारी, नई दिल्ली, पृ. 38, 62*
3. *अक्षरा साहित्यिक पत्रिका, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, भोपाल, नवम्बर 2003, पृ. 25*
4. *वीणा साहित्यिक मासिक पत्रिका, रवीन्द्रनाथ टैगोर मार्ग, इन्दौर, जनवरी, 2008, पृ. 24–28*
5. *जनसत्ता समाचार पत्र, नई दिल्ली, 3 जनवरी 2000, पृ. 06*
6. *स्वयं का सर्वेक्षण व निष्कर्ष*